<u>उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय, नैनीताल</u>

रिट याचिका संख्या(एम/एस) संख्या 511 सन 2021

जमुना देवी..... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य.....प्रतिवादी

के साथ

रिट याचिका संख्या(एम/एस) संख्या 339 सन 2021

पद्मा नेगी..... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य..... प्रतिवादी

के साथ

रिट याचिका संख्या(एम/एस) संख्या 324 सन 2021

लीला देवी..... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य..... प्रतिवादी

के साथ

रिट याचिका संख्या(एम/एस) संख्या 325 सन 2021

अनीता देवी..... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य..... प्रतिवादी

के साथ

रिट याचिका संख्या(एम/एस) संख्या 338 सन 2021

लीला स्यतरी..... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य..... प्रतिवादी

के साथ

रिट याचिका संख्या(एम/एस) संख्या 340 सन 2021

रामा भंडारी..... याचिकाकर्ता बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य..... प्रतिवादी

श्री T.P. एस. ताकुली, अधिवक्ता, याचिकाकर्ताओं की ओर से।
श्री G.S. नेगी, उत्तराखंड राज्य के लिए अतिरिक्त सीएससी।
श्री राजेश शर्मा, केन्द्र सरकार के स्थायी वकील और श्री मनोज कुमार, भारत सरकार के स्थायी वकील।
श्री गोपाल के. वर्मा, उत्तराखण्ड राज्य के लिए स्थायी वकील।

माननीय शरद कुमार शर्मा, जे (मौखिक)

ये छह रिट याचिकाओं का समूह है, जो तथ्यों और कानून के एक सामान्य प्रश्न पर विचार करता है, और यह न्यायालय मेरी पीड़ा को दर्ज करने में संकोच नहीं करेगा, कि यह एक बहुत ही दयनीय स्थिति है, जहां मान्यता प्राप्त युद्ध विधवाओं को, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 को लागू करके, अनुग्रह राशि के भुगतान के लिए न्यायिक कार्यवाही का सहारा लेने के लिए मजबूर किया जाता है, जो अन्यथा उन्हें देय था, जैसा कि सरकारी आदेश संख्या. 169/XVII 3/14-09 (31)/2014, दिनांक 05.03.2014 के अनुसरण में युद्ध विधवाओं को दिए जाने की परिकल्पना की गई है।

2. इन सभी मामलों में जो विशिष्टता है वह यह है कि प्रत्येक युद्ध विधवा के मृत पति, जो सेना के जवान थे की वीरता का कार्य एक तथ्य है जिससे प्रतिवादियों ने दलीलों और रिकार्डों द्वारा स्वीकार किया है और उन्होने इस तथ्य को आगे भी स्वीकार किया है कि यहां याचिकाकर्ताओं के दिवंगत पतियों ने देश के लिये और सेना के आपरेशन में या जम्मू कश्मीर राज्य में उग्रवाद को रोकने के लिये देश की सेवा करते हुये अपना जीवन लगा दिया था और फिर भी वे उन लाभों से वंचित है जिन्हे अन्यथा राज्य द्वारा शासनादेश संख्या 169/XVII-3/14-09(31)/2014 दिनांक 05.03.2014 द्वारा उन्हे भुगतान किया जाना मान्य है।

3. मेरा विचार भी काफी तार्किक रूप से यही है कि युद्ध विधवाओं के साथ अलग व्यवहार नही किया जा सकता है खासकर तब जब उन्हे उनके दिवंगत पतियों द्वारा राष्ट्र के लिये दी गयी वीरतापूर्ण सेवाओं के लिये लाभ दिया जाना हो। प्रत्येक रिट में विचाराधीन सटीक तथ्य का विवरण यहां दिया गया है।

" WPMS No.511 of 2021 में," "जमुना देवी बनाम उत्तराखंड राज्य और अन्य" ""

1. **मौजूदा रिट याचिका के तथ्य यह हैं कि** स्व0 श्री नयन सिंह जो उस समय नायब सूबेदार के पद पर तैनात थे, जिनका आर्मी नं0 जे0सी0–137587पी0 था कुमांऊ रेजिमेंट से जुड़े थे और जब आतंकवाद के खिलाफ एक सैन्य अभियान जिसे ''ब्लू स्टार ऑपरेशन'' कहा गया जो दिनांक 07.06.1984 को चलाया गया था, सैन्य अभियान के दौरान शहीद हो गये थे बाद में उन्हे युद्ध हताहत घोषित कर दिया गया था। केवल इतना ही नही बल्कि स्वयं भारत के राष्ट्रपति द्वारा उनके दिवंगत पति की वीरता को मान्यता दी थी और 26.11.1985 को मरणोपरांत ''शौर्य चक्र'' से भी सम्मानित किया था जिसके सम्बन्ध में प्रतिवादी संख्या 07 ने इस आशय का प्रमाण पत्र भी जारी किया है।

2. उपरोक्त तथ्यों से इस बात पर कोई संदेह या तथ्यों का कोई विवाद नही है कि याचिकाकर्ता के दिवंगत पति की मृत्यु एक सैन्य अभियान के दौरान हुयी थी और वह ''युद्ध हताहत'' थे। राष्ट्र की सेवाओं के लिये उन्हे मान्यता महामहिम राष्ट्रपति द्वारा दी गयी थी। इसलिये याचिकाकर्ता अनुग्रह भुगतान का हकदार होगा जो दिनांक 05. 03.2014 के शासनादेश के अनुक्रम में राज्य द्वारा प्रदान किया गया है।

3. यह केवल युद्ध विधवाओं के सम्बन्ध में उक्त सरकारी आदेश की प्रयोज्यता तथा सरकारी आदेश दिनांकित 05.04.2014 द्वारा दिये गये अनुग्रह लाभ के सम्बन्ध में है। युद्ध शहीदों के सम्बन्ध में रिट याचिका संख्या (एम/एस) 294/2015 ''मंजू देवी बनाम राज्य आदि'' इस न्यायालय के समक्ष विचारण के लिये आयी थी जिसमें भुगतान से सम्बन्धित सम्भावनायें बतायी गयी थी। युद्ध विधवाओं को अनुग्रह राशि का भुगतान इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा अपने निर्णय दिनांकित 23.02.2018 द्वारा तय किया गया था जिसके तहत सरकारी आदेश दिनांकित 05.03.2014 के निहितार्थ और लाभ के पहलू को ध्यान में

रखकर किया गया था और बढी हुयी राशि को युद्ध विधवाओं को देय करने का निर्देश दिया था, और व्यापक सिद्धान्त जो उक्त निर्णय द्वारा निर्धारित अनुपात मा0 सर्वोच्च न्यायालय के आलोक में ए0आई0आर0 1967, पेज 1301 ''डी0 आर0 निम बनाम भारत संघ'' रिपोर्ट किये गये निर्णय के प्रासंगिक पैरा 3,4 व 6 निम्नानुसार है–

> "3. उपनियम (1) स्पष्ट रूप से आवंटन के वर्ष के समनुदेशन के प्रयोजनों के लिए नियम 3 को नियंत्रक नियम बनाता है।नियम तब अधिकारियों को दो श्रेणियों में विभाजित करता हैः
>
> (1) नियमों के प्रारम्भ पर भारतीय पुलिस सेवा में एक अधिकारी, और
>
> (2) नियमों के प्रारम्भ के बाद भारतीय पुलिस सेवा में नियुक्त एक अधिकारी।
>
> हम दूसरी श्रेणी से चिंतित हैं क्योंकि अपीलकर्ता को 1955 में भारतीय पुलिस सेवा में नियुक्त किया गया था।दूसरी श्रेणी को फिर से दो उपश्रेणियों में विभाजित किया गया हैः(क) प्रतियोगी परीक्षा के परिणामस्वरूप सेवा में नियुक्त अधिकारी, और (ख) भर्ती नियमों के नियम 9 के अनुसार पदोन्नति द्वारा सेवा में नियुक्त अधिकारी।चूँकि अपीलकर्ता को पदोन्नति द्वारा सेवा में नियुक्त किया गया था, हम दूसरी उपश्रेणी से संबंधित हैं।अपनाया गया सूत्र इस प्रकार काम करता हैःसबसे पहले प्रतियोगिता द्वारा सेवा में भर्ती किए गए अधिकारियों में से सबसे कनिष्ठ के आवंटन के वर्ष का पता लगाएं, जिन्होंने अपीलकर्ता के कार्यपालन की शुरुआत की तारीख से पहले की तारीख से एक वरिष्ठ पद पर लगातार कार्य किया।हम फिर से उल्लेख कर सकते हैं कि अपीलकर्ता ने 25 जून, 1947 को पुलिस अधीक्षक के रूप में कार्य करना शुरू किया था।लेकिन, पहले तदर्थंतुक के अनुसार, यदि अपीलकर्ता प्रतियोगिता द्वारा भर्ती किए गए किसी अधिकारी की तारीख से पहले की तारीख से किसी वरिष्ठ पद तदर्थ लगातार कार्य करना शुरू कर देता है, तो उसके आवंटन का निर्धारण केन्द्र सरकार द्वारा तदर्थ रूप से किया जाना था।इस मामले के तथ्यों के अनुसार, पहला परन्तुक लागू होता है न कि वरिष्ठता नियमों के नियम 3 (3) (बी) में दिए गए परीक्षण पर।दूसरा परंतुक कार्यवाहक अवधि को दो वर्गों में विभाजित करके पहले परंतुक के संचालन को सीमित करता हैः
>
> पहला, चयन सूची में किसी अधिकारी को शामिल करने की तारीख से पहले की अवधि और
>
> दूसरा, उस तारीख के बाद की अवधि।

पहली अवधि की गणना तभी की जा सकती है जब ऐसी अवधि को आयोग के परामर्श से केन्द्र सरकार द्वारा अनुमोदित किया जाए।

अपीलार्थी का नाम 1956 की चयन सूची में शामिल किया गया था।इसलिए, अपीलकर्ता के मामले में, 1956 से पहले की अवधि को आयोग के परामर्श से केन्द्र सरकार द्वारा अनुमोदित किया जाना था।

4. यहां हम नियम 3 के स्पष्टीकरण को 1 को नोटिस कर सकते हैं, भारत सरकार यह भी कहती है कि अपीलकर्ता ने अस्थाई या स्थाई व्यवस्था में लगातार कार्य किया है। लेकिन फिलहाल हम मानते हैं कि भारत सरकार के तर्क में कोई दम नही है और स्पष्टीकरण वर्तमान तथ्यों के मामले में लागू नही होता है।

अतः नियम के अनुसार केन्द्र सरकार को 1956 से पहले अपीलकर्ता पदस्थापना की अवधि को मंजूरी देने या न देने के बाद आवंटन के वर्ष का तदर्थ निर्धारण करना था। भारत सरकार का कहना है कि उन्होने विवादित आदेश जारी करके इसे निर्धारित किया जिसका प्रासंगिक भाग इस प्रकार है–

> ''भारत सरकार ने अब आयोग की सहमति से निर्णय लिया है कि राज्य सिविल सेवा अधिकारी जो 19 मई 1951 से पहले कार्य कर रहे थे, लेकिन उस तारीख के बाद भारतीय प्रशासनिक सेवा में नियुक्त किये गये हैं, उन्हे वरिष्ठता के निर्धारण के प्रयोजनों के लिये नियुक्त किया जाना चाहिये तथा 19 मई 1951 से वरिष्ठ पदों पर निरन्तर पद पर बने रहने का लाभ दिया जायेगा। यही निर्णय 19 मई 1951 के बाद भारतीय पुलिस सेवा में पदोन्नत राज्य पुलिस अधिकारियों के मामले में भी लागू होगा।''

6. यह ध्यान देने योग्य है कि शुरुआत में 19 मई 1951 की तारीख का भारतीय पुलिस सेवा की पदक्रम सूची को अंतिम रूप देने से कोई लेना देना नही था क्योंकि यह एक ऐसी तारीख थी जिसमें आई0ए0एस0 के लिये पदक्रम सूची को अंतिम रूप देने का संदर्भ था। इसके अलावा ऊपर दिये गये शपथ पत्र के पैरा 9 में उल्लिखित विसंगत स्थिति से बचने के प्रश्न पर इस तारीख की अधिक प्रासंगिकता प्रतीत नही होती है। इस तिथि को स्पष्ट रूप से आई0ए0एस0 के लिये चुना गया था क्योंकि इस तिथि से पूर्व सेवा में भर्ती किये गये व्यक्तियों के लिये पदक्रम सूची को अंतिम रूप दिया गया था और कुछ हद तक स्थिर चरण में जारी किया गया था, लेकिन यह तिथि भारतीय पुलिस सेवा पर क्यों लागू नही की जानी चाहिये इसकी पर्याप्त व्याख्या नही की गयी है। श्री बी0आर0एल0 अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता अयंगर ने दृढता से आग्रह करते हुये कहा कि लागों को वर्गीकृत करने के लिये महत्वपूर्ण तारीख के रूप में 19 मई 1951 का चयन मनमाना और तर्कहीन है। इस मामले में हम उनसे सहमत हैं। यह आगे श्री डी0के0गुहा के शपथ पत्र दिनांकित 9 दिसंबर 1966 से दिखाई देता है जो कि भारत सरकार के गृहमंत्रालय के उपसचिव थे

जिसमें वर्णित है कि भारत सरकार ने हाल में कानून मंत्रालय के पत्र संख्या 2/32/514–ए0आई0एस0 दिनांकित 25 अगस्त 1955 उन एस0सी0एस0/एस0पी0एस0 अधिकारियों पर लागू नही होगा, जो आई0ए0एस0/आई0पी0एस0 (वरिष्ठता का विनियमन) नियम 1954 की घोषणा और इसकी तारीख से पहले आई0ए0एस0/आई0पी0एस0 में नियुक्त किये गये थे।

उपरोक्त पत्र जारी करने की तारीख से पहले निरंतर कार्यपालन को गृहमंत्रालय एवं लोक सेवा आयोग द्वारा अनुमोदित किया गया था।

पूर्व में एक ऐसा ही मामला बिहार के एक आई0पी0एस0 अधिकारी श्री सी0एस0 प्रसाद के मामले में भी वरिष्ठ पदों पर पूर्ण निरंतर पद का लाभ देने और उनके आवंटन के वर्ष को तदनुसार संशोधित करने का निर्णय लिया गया है लेकिन यह कहा गया है कि जैसा श्री निम को 22 अक्टूबर 1955 को आई0पी0एस0 नियुक्त किया गया था। जैसा कि आई0पी0एस0(वरिष्ठता का विनियमन) नियम 1954 की घोषणा के बाद और 25 अगस्त 1955 को पत्र जारी होने के बाद उनका मामला इस श्रेणी में भी नही आता है। सरकार के मामले के उपरोक्त कथन से यह भी पता चलता है कि 19 मई 1951 की तारीख एक कृत्रिम और मनमानी तारीख थी, जिसका नियम 3(3) के पहले और दूसरे परन्तुक लागू होने से कोई लेना देना नही था। हमे ऐसा प्रतीत होता है कि नियम 3(3) के दूसरे परन्तुक के तहत की अवधि किसी विशेष अधिकारी की नियुक्ति पर सभी प्रासंगिक तथ्यों पर विचार करते हुये आयोग के परामर्श से केन्द्र सरकार द्वारा विचार किया जाना चाहिये। केन्द्र सरकार किसी भी प्रकार से मनमानी तिथि का चुनाव नही कर सकती और यह ऐसा लगता है कि उसने यही किया है जिसके अनुसार उस तारीख से पहले की अवधि को दूसरे परन्तुक के भीतर केन्द्र सरकार द्वारा अनुमोदित नही माना जायेगा।''

वास्तव में यह विवाद में नही है बल्कि स्वीकार किया गया है, कि उक्त निर्णय के अनुपालन में न्यायालय ने फैसले के पैरा संख्या 9 में शहीदों के वीरतापूर्ण कार्य को मान्यता दी है और सिद्धान्तो की पुष्टि की है कि वे विधवायें हकदार थी एवं सरकारी आदेश के दायरे में आयेंगी, जिनके पतियों की मृत्यु सरकारी आदेश जारी होने से पहले हो गयी है और ऐसा नही है कि उक्त निर्णय के प्रतिपादन के बाद उत्पन्न होने वाला लाभ दिनांक 05.03.2014 के सरकारी आदेश से उन रिट याचिकाओं में से याचिकाकर्ता को पहले विस्तारित किया जा चुका है।

उपरोक्त निर्णय के बाद, यह मामला एक बार फिर से एक और रिट याचिका में विचार के लिये आ गया जो कि रिट याचिका संख्या 1182/2020 (एम/एस) ''पार्वती देवी बनाम राज्य आदि'' जिसमें इस न्यायालय की समन्वय

पीठ ने एक बार फिर दिनांक 05.03.2014 के शासनादेश के निहितार्थों पर विचार करते हुये यह ध्यान में रखा था कि पहले के निर्णय दिनांकित 23.02. 2018 को समन्वय पीठ द्वारा दिया गया था, जैसा कि ऊपर बताया गया है एवं बाद में मा0 सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एस0एल0पी0 में पुष्टि की गयी थी जिसे 26.11.2018 को खारिज कर दिया गया है। युद्ध विधवाओं के अनुग्रह भुगतान की पात्रता से सम्बन्धित विवाद को समाप्त कर दिया गया है। इसलिये यह समझा जायेगा कि वे दिनांक 05.03.2014 के सरकारी आदेश के दायरे एवं विचार क्षेत्र की परिधि में आते हैं। दिनांक 23.02.2018 के निर्णय का प्रासंगिक भाग यहां निम्नलिखित है–

> ''हालांकि निर्धारण की तिथि के लिये कोई विशिष्ट चुनौती नही है, लेकिन न्यायालय एक युद्ध विधवा के मामले से निपट रहा है और पूर्ण न्याय करने के लिये, न्यायालय दिनांक 05.03.2014 के शासनादेश को पढता है और घोषित करता है कि यह सभी सैन्य विधवाओं/माता–पिता को उनके सामने आने वाली कठिनाइयों को कम करने के लिये पूर्वव्यापी रूप से अनुग्रह भुगतान के लिये लागू किया जायेगा। याचिकाकर्ता के मामले पर आज से 6 सप्ताह के भीतर विचार किया जायेगा।''

6. WPMS No.1182 of 2020 दिनांक 04.11.2020 के निर्णय का प्रासंगिक पैरा–

> ''याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि समकक्ष पीठ द्वारा दिये गये उपरोक्त निर्णय को इस अदालत की खण्डपीठ और एस0एल0पी0 द्वारा विशेष अपील में प्रमाणित की गयी थी। उक्त निर्णय के विरुद्ध दायर याचिका को भी माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिनांक 26.11.2018 को खारिज कर दिया था।
>
> प्रतिवादी की ओर विद्वान अधिवक्ता भी याचिकाकर्ता की ओर से की गयी प्रस्तुति पर विवाद नही करते हैं कि क्या शासनादेश दिनांकित 05.03.2014 से या पूर्वव्यापी रूप से लागू होगा, इस न्यायालय की एक समन्वित पीठ द्वारा पहले ही तय किया जा चुका है।

चूंकि प्रश्न यह है कि क्या दिनांक 05.03.2014 का शासनादेश केवल भावी रूप से या पूर्वव्यापी रूप से लागू होगा, इस न्यायालय की एक समकक्ष पीठ द्वारा तय किया गया है, इसलिये मौजूदा रिट याचिका का निपटान भी WPMS No.294 of 2015 दिनांक 23.02. 2018 को निर्णय लिया गया। सक्षम प्राधिकारी दिनांक 05.03.2014 के सरकारी आदेश के लाभ के लिये याचिकाकर्ता के आवेदन पर विचार करेगा और इस आदेश की प्रमाणित प्रति पेश करने की तारीख से छः सप्ताह की अवधि के भीतर नियमानुसार उचित निर्णय लेगा। इस प्रकार लिये गये निर्णय के बारे में एक सप्ताह के भीतर याचिकाकर्ता को सूचित कर दिया जायेगा।''

7. उपर्युक्त कारणों को ध्यान में रखते हुए मेरा विचार है कि एक बार सरकारी आदेश दिनांक 05.03.2014 के प्रवर्तन के सिद्धांतों युद्ध विधवाओं को पिछले समय के प्रभाव से अनुग्रह भुगतान प्रदान करने के लिए जैसा कि राज्य द्वारा माना गया है, दिनांक 05.03.2014 के सरकारी आदेश द्वारा माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक न्यायिक रूप से प्रमाणित है।याचिकाकर्ता निसंदेह उक्त प्रावधानों के लाभ के क्षेत्र में आएगा और राज्य द्वारा अपनाया गया रुख कि बाद में राज्य ने उत्तराखंड शहीद आश्रित अनुग्रह अधिनियम 2020 को कानून बनाया है।इसकी कोई प्रासंगिता नहीं होगी क्योंकि इस अधिनियम को बहुत बाद में कानून बनाया गया था।इस तथ्य के अलावा यह राज्य द्वारा लिए गए अपने स्वयं के निर्णय का उल्लंघन है जो दिनांक 05.03.2014 के सरकारी आदेश द्वारा लिया गया था, बल्कि 2021 के उपरोक्त अधिनियम संख्या 05 को जारी करने का उद्देश्य जानबूझकर युद्ध विधवाओं को कल्याण अधीनस्थ कानून के तहत दिए गए निर्णय के प्रभाव को ओवरराइड करना था और इसलिए केवल 2021 के बाद के अधिनियम द्वारा लगाए गए प्रतिबंधो के कारण, इस न्यायालय की राय है कि याचिकाकर्ता को लाभों से वंचित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि यह पहले ही माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तय किया जा चुका है, कि निर्णय का प्रभाव, जो माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक प्रमाणित है, ओवरराइड नहीं किया जा सकता है

8. इसी प्रकार का एक मामला पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की समन्वय पीठ के समक्ष पंजाब विधि रिपोर्ट 452 ''कृष्णा देवी

बनाम भारत सरकार और अन्य'' 68(2012) में दिए गए एक निर्णय में विचार के लिए सामने आया, जिसमें सैन्य अभियान के कारण मारे गए सैनिकों और उनकी विधवाओं हेतु अनुग्रह राशि के अधिकार के संबंध में पहलू, जिन्हें युद्ध में हताहत माना गया था, सरकारी आदेश या निर्देशों की शर्तों के तहत अनुग्रह राशि का हकदार होगा।न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामलों में जहां सेना के किसी व्यक्ति की मृत्यु किसी सैन्य अभियान या युद्ध क्षेत्र में तैनाती के कारण हुई है और वहां सेना के जवान की दुखद मृत्यु हो जाती है, मृतक सैनिक या अर्धसैनिक कर्मियों का परिवार भारत सरकार के दिनांक 26.09.1998 के निर्देशों के आधार अनुग्रह राशि प्राप्त करने का हकदार होगा ;(जैसा कि तब उक्त मामले में निहित था)। वास्तव में, यदि उक्त निर्णय के पैरा 9 और 12 को ध्यान में रखा जाता है, जिसे यहाँ निकाला गया हैः.

''9. यह अनुग्रह राशि एकमुश्त मुआवजा अन्य लाभों के बावजूद दिया जाना है, मृतक सैन्य कर्मी के परिवार के जो भी हकदार होंगे।इन निर्देशों के पैरा–4 के अनुसार, अनुग्रह राशि एकमुश्त मुआवजे के भुगतान को नियंत्रित करने वाली शर्तों और दिशा निर्देशों को संलग्न संलग्नक में इंगित किया गया है। संलग्नक के अनुसार, अनुग्रह राशि एकमुश्त मुआवजे के भुगतान के लिए संतुष्ट होने की मुख्य शर्त यह है कि संबंधित कर्मचारी की मृत्यु प्रमाणिक आधिकारिक कर्तव्यों अर्थात वास्तविक प्रदर्शन में हुई होगी। मृत्यु की घटना और सरकारी सेवा के बीच एक आकस्मिक संबंध स्थापित किया जाना चाहिए।खंड **8** मुख्य निर्देश के पैरा **1** के खंड–**(सी)** द्वारा कवर किए जाने वाले मामलों से संबंधित है।इस **अनुग्रह** राशि के अनुसार मुआवजा आम तौर पर केवल उन मामलों तक ही सीमित है जहां सेना कर्मियों की मृत्यु प्रत्यक्ष रूप से वास्तविक सैन्य क्षेत्र अभियान के कारण होती है।दिनांक **22.09.1998** के निर्देशों के अंतर्गत आने वाले मामलों के उदाहरण भी पत्र के साथ संलग्न किए गए हैं।ये सभी ऐसी स्थितियों से संबंधित हैं जहां कर्तव्यों का पालन करते समय दुर्घटना के परिणामस्वरूप मृत्यु होती है जो वास्तविक कार्रवाई या सैन्य क्षेत्र अभियान के स्थल पर यात्रा करने जैसे कर्तव्यों के सक्रिय प्रदर्शन पर प्रदर्शित होगी।इनमें से कोई भी इस बात का संकेत नहीं देता है कि केवल अभियान क्षेत्र में तैनाती से ही दिनांक 22.09.1998 के निर्देशों के तहत मृतक डिफेंस सर्विस कर्मियों के परिवारों अनुग्रह राशि का अधिकार प्राप्त होगा, और न ही यह उस स्थिति को कवर करता है जहां एक सैन्य कर्मी को अभियान क्षेत्र में प्रतिनियुक्त किया जाता है, लेकिन किसी बीमारी के कारण मृत्यु हो जाती है जैसा कि मामला है जहां याचिकाकर्ता के पति की मृत्यु 01.10.2000 को

तीव्र परिसंचरण विफलता, मस्तिष्क एनोक्सिया के कारण हुई थी। यद्यपि बीमारी और मृत्यु को प्रमाणिक सैन्य कर्तव्यों का पालन करते समय सैन्य सेवा के कारण माना गया था, जिसके लिए याचिकाकर्ता को विशेष पारिवारिक पेंशन दी गई है, लेकिन याचिकाकर्ता का दावा भारत सरकार द्वारा जारी निर्देशों के अंतर्गत नहीं आता है।

''12. हरियाणा सरकार द्वारा जारी (संलग्नक पी–6) दिनांक 30.09.1999 के निर्देशों के तहत याचिकाकर्ता द्वारा किए गए दावे को हरियाणा सरकार द्वारा दिनांक 07.11.2001, (संलग्नक आर–2) द्वारा जारी किए गए बाद के स्पष्टीकरण के आलोक में स्वीकार नहीं किया जा सकता है, जिसके अनुसार, 30.09.1999 के निर्देशों का लाभ केवल हरियाणा से संबंधित युद्ध नायकों को जारी किया जाएगा, जो ऑपरेशन के दौरान वीरगति को प्राप्त हो जाते है या उसी दौरान विकलांग हो जाते हैं अनुग्रह राशी (1.4.1999 से 14.6.2001 की अवधि के दौरान) संबंधित चिकित्सा अधिकारियों द्वारा व्यक्ति के जीवन के लिए मूल्यांकन की गयी स्थायी विकलांगता के प्रतिशत पर निर्भर करता है कि उन्हे कल्याण के उपाय के तौर पर सेवा में बनाये रखा जाय या सेवा से बाहर कर दिया जाय। यह अनुग्रह राशी अनुदान केवल युद्ध नायकों की बहादुरी और बलिदान के कार्यों को मान्यता देने के लिए ऑपरेशन के दौरान या उसके दौरान होने वाले हताहतों को दिया जाना है। यह आगे स्पष्ट किया गया है और उल्लेख किया गया है कि परिचालन क्षेत्र में कोई हताहत हो रहा है, लेकिन संचालन में नहीं अर्थात जहाँ वास्तविक लड़ाई आदि हुई हो। राज्य सरकार अनुग्रह अनुदान नीति के अंतर्गत नहीं आता है। युद्ध घटनाओं और युद्ध दुर्घटनाओं को छोड़कर कोई अन्य प्रकार का हताहत दिनांक 30.09.1999 की नीति के तहत कवर नहीं किया गया है। संतोष (सुप्रा) के मामले में याचिकाकर्ता के वकील द्वारा दिए गए निर्णय में हरियाणा सरकार द्वारा दिनांक 07.11.2001 (संलग्नक आर–2) को जारी किए गए स्पष्टीकरण को ध्यान में नहीं रखा गया है, जिसे जब दिनांक 30.09.1999 के नीतिगत निर्देशों के अनुरूप पढ़ा जाएगा, तो उस आशय को रेखांकित किया जाएगा जिसके साथ उक्त निर्देश हरियाणा सरकार द्वारा जारी किए गए थे। दिनांक 30.09.1999 (संलग्नक 6) के निर्देशों का विषय, जिसमें लिखा है, ''कारगिल और अन्य क्षेत्रों में मारे गए/लापता/युद्ध के कैदियों/विकलांग सशस्त्र बलों के कर्मियों के परिवारों को अनुग्रह राशि और बच्चों की शिक्षा अनुदान; भी उसी का संकेत देता है जैसा कि हरियाणा सरकार द्वारा अपने निर्देशों दिनांक 07.11.2001 (संलग्नक आर–2) के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, मौजूदा रिट याचिका में कोई योग्यता नहीं पाते हुए, वही खारिज कर दिया जाता है।

9. यह निर्धारित किया गया है कि अनुग्रह राशि के भुगतान के लाभ के लिए, इसे तब बढ़ाया जाना चाहिए जब घातक घटना घटी हो जिसके परिणाम स्वरूप किसी कर्मचारी अर्थात सेना के जवान की मृत्यु हो गयी हो जो अपने आधिकारिक कर्तव्यों का ईमानदारी से निर्वहन कर रहा हो। इसका मतलब यह है

कि आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन और इसके कारण के बीच एक घनिष्ठ संबंध होना चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप मृत्यु हुयी और इसलिए, अनुग्रह राशि का भुगतान केवल उन हताहतों तक ही सीमित होगा, जो सेना के अभियान के कारण हताहत होते हैं। अनुग्रह राशि का लाभ देने का विधायिका का इरादा केवल हमारे महान राष्ट्र भारत के युद्ध नायकों के वीरतापूर्ण कार्य को मान्यता देने के उद्देश्य से है, जो सेना के अभियान में वीरतापूर्ण रूप से शहीद हुये थे, या सेना के अभियान के कारण विकलांग हो गए थे।इसलिए, तत्काल मामलों में चूंकि निर्विवाद रूप से संबंधित याचिकाकर्ताओं जो युद्ध विधवायें हैं, जिनके पति सेना के अभियान के दौरान हताहत हो गये थे, उन्हें युद्ध हताहतों के रूप में वर्गीकृत किया जाएगा और इस प्रकार वे उक्त सिद्धांत के आधार अनुग्रह राशि के हकदार होंगे।विशेष रूप से जब याचिकाकर्ता युद्ध विधवाओं के सेना कर्मियों की मृत्यु के ये पहलू जिनमें वे युद्ध में हताहत हुए हैं, प्रतिवादियों ने अपने जवाबी शपथ पत्र में ऐसी दलीलों से इनकार नहीं किया है।

10. एक अन्य निर्णय के लिए एक संदर्भ की आवश्यकता हो सकती है और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि यह एक प्रमुख मुद्दे से संबंधित है, क्योंकि यह ''कर्नाटक राज्य और अन्य बनाम कर्नाटक पॉन ब्रोकर्स एसोसिएशन और अन्य'' 6 (2018) सर्वोच्च न्यायालय 363ए में रिपोर्ट किए गए निर्णय में दी गई रिट याचिकाओं के इन समूह में विचार करता है।तत्काल मामले में इस निर्णय का संदर्भ आवश्यक हो जाता है, जैसा कि अतिरिक्त न्यायाधीश द्वारा तर्क दिया गया है। C.S.C. कि युद्ध विधवाओं या स्वतंत्रता सेनानियों को लाभ प्रदान करने के लिए नियम और शर्तों को नियंत्रित करने वाले राज्य सरकार द्वारा बनाए गए एक बाद के विधान के कारण इस पर क्या प्रभाव होगा, जब विधवाओं को लाभ पहले ही प्रचलित सरकारी आदेशों के तहत दिया जा चुका है, जिन्हें प्रासंगिक समय पर लागू किया गया था।माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उपर्युक्त निर्णय में, विशेष रूप से पैरा 19,20,21,22,24 और 25 में, अभिनिर्धारित किया है, जिसके तहत निष्कर्ष निकाले गए हैंः.

> "19. श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स लिमिटेड और अन्य बनाम ब्रोच बरो नगर पालिका और अन्य, में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ, इस न्यायालय के निर्णय को प्राप्त करने की दृष्टि से पारित सत्यापन अधिनियम की

वैधता के प्रश्न पर विचार करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया कि न्यायालय ने माना है कि भले ही उसके पास क्षमता हो, विधानमंडल केवल ऐसा कानून पारित नहीं कर सकता है जिसके लिये इस न्यायालय का निर्णय बाध्यकारी नहीं होगा। इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

> 4 वैधानिक प्राप्त होने पर , केवल यह घोषित करना पर्याप्त नही है कि न्यायालय का निर्णय बाध्य नही होगा क्योंकि यह न्यायिक शक्ति के प्रयोग में निर्णय को उलटने के समान है जो विधान मंडल के पास नही है या प्रयोग नही करता अदालत का निर्णय हमेशा बाध्यकारी होना चाहिए जब तक कि जिन शर्तों पर यह आधारित है, कि वे इतनी मौलिक रूप से न बदली जाय कि बदली हुयी परिस्थितियों में निर्णय नहीं दिया जा सकता था।

20- कावेरी जल विवाद न्यायाधिकरण के मामले में पुनः इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने बड़ी संख्या में प्राधिकारियों को संदर्भित करने के बाद निम्नलिखित निर्णय लियाः

> 76. इन प्राधिकरणों से जो सिद्धांत उभरता है वह यह है कि विधायिका उस आधार को बदल सकती है जिस पर न्यायालय द्वारा निर्णय दिया है और इस प्रकार सामान्य रूप से कानून को बदल सकता है, जो बड़े पैमाने पर व्यक्तियों और घटनाओं के एक वर्ग को प्रभावित करेगा। हालाँकि, यह एक व्यक्तिगत निर्णय को रद्द नहीं कर सकता है। अन्तर पक्ष और अकेले केवल उनके अधिकारों और देनदारियों को प्रभावित कर सकता है। विधायिका की ओर से ऐसा कार्य राज्य की न्यायिक शक्ति का प्रयोग करने और अपील न्यायालय या न्यायाधिकरण के रूप में कार्य करने के बराबर है।

21- S.R.भागवत आदि बनाम मैसूर राज्य में तीन न्यायाधीशों की पीठ एक ऐसे मामले पर विचार कर रही थी जिसमें याचिकाकर्ताओं को एक विशेष तिथि से कुछ पदोन्नति और सेवा लाभों का हकदार ठहराया गया था। भले ही ये लाभ उन्हें दिए गए थे, लेकिन राज्य ने उन्हें मौद्रिक लाभ नहीं दिए और वास्तव में, एक कानून पारित किया, जिसका प्रभाव याचिकाकर्ताओं को होने वाले मौद्रिक लाभों से पहले उनके पक्ष में पारित निर्णयों के संदर्भ मौद्रिक लाभों से उन्हे वंचित करने का था। इस विषय पर पूरे कानून पर विचार करने के बाद इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

> 12. अब इस न्यायालय के कई निर्णयों से यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि पक्षकारों के बीच एक बाध्यकारी न्यायिक निर्णय को किसी विधायी शक्ति की सहायता से ऐसे उपबंध को अधिनियमित करके अप्रभावी नहीं बनाया जा सकता है जो वास्तव ऐसे निर्णय को निरस्त करता है। एक विधायी अधिनियम जो निर्णय के आधार या बुनियाद को विस्थापित करता है और पूर्वव्यापी प्रभाव वाले ऐसे अधिनियम द्वारा कवर किए जाने वाले पूरे विषय से संबंधित व्यक्तियों के एक वर्ग पर समान रूप से लागू होता है।

22. तमिलनाडु राज्य बनाम केरल राज्य और अन्य में, इस न्यायालय की संविधान पीठ ने इस प्रश्न पर फिर से विचार किया कि क्या विधानमंडल उच्च न्यायालयों के निर्णय को शून्य कर सकता है। बड़ी संख्या में निर्णयों का उल्लेख करने के बाद, इस न्यायालय ने निम्नलिखित सिद्धांत निर्धारित किए:

I. कि शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत भारत के संविधान में एक मजबूत सिद्धांत है, भले ही संविधान में कोई विशिष्ट प्रावधान न हो;
II. कार्यपालिका और विधानमंडल से न्यायालयों की स्वतंत्रता कानून के शासन के लिए मौलिक है और भारतीय संविधान के बुनियादी सिद्धांतों में से एक है।
III. राज्य के तीन अंगों विधानमंडल, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 में निहित समानता के सिद्धांतों का एक परिणाम है। नतीजन एक कानून को इस आधार पर रद्द कर सकता है कि यह शक्ति पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन करता है क्योंकि यह भारत के संविधान का अनुच्छेद 14 के अनुसार समानता के निषेध के बराबर होगा।
IV. उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय को भारत के संविधान द्वारा यह निर्धारण का अधिकार दिया गया है कि क्या संसद या राज्य विधानमंडल द्वारा बनाई गई विधि शून्य है;
V. शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत न्यायालयों के अंतिम निर्णयों पर लागू होता है। विधायिका किसी न्यायालय के किसी भी निर्णय को अमान्य या अप्रभावी घोषित नहीं कर सकती है। हालाँकि, यह किसी न्यायालय द्वारा बताए गए दोषों को उपाय के लिए या इसके बारे में पता चलने पर एक संशोधन अधिनियम पारित कर सकता है;
VI. यदि विधानमंडल के पास एक मान्य कानून बनाने की शक्ति और क्षमता है तो वह कानून को पूर्वव्यापी बना सकता है;
VII. यहां तक कि जहां विधि विधानमंडल द्वारा अधिनियमित की जाती है, उसकी क्षमता के भीतर दिखाई देती है, लेकिन यदि सार में इसे न्यायिक आदेशिका में हस्तक्षेप करने के प्रयास के रूप में दिखाया जाता है, तो ऐसी विधि को शक्ति पृथक्करण के सिद्धांत का भंग करते हुए अमान्य किया जा सकता है।

24. उपर्युक्त निर्णयों के विश्लेषण पर यह कहा जा सकता है कि विधानमंडल के पास पिछले समय के प्रभाव से कानूनों में संशोधन करने की शक्ति सहित मान्य कानून बनाने की शक्ति है। हालाँकि, यह अयोग्यता के कारणों को दूर करने के लिए किया जा सकता है। जब ऐसा कानून पारित किया जाता है तो विधायिका मूल रूप से उन त्रुटियों को ठीक करती है जो न्यायिक निर्णय में बताई गई हैं। परिणामस्वरूप, यह पहले के विधान में की गई गलतियों को दूर करके कानून में संशोधन करता है, जिसका प्रभाव निर्णय के आधार और नींव को हटाना है। यदि ऐसा किया जाता है, तो यह वैधानिक नियम के अतिक्रमण के बराबर नहीं है।

> 25. हालाँकि, विधानमंडल उन निर्णयों को शून्य नहीं कर सकता है जो कानून में संशोधन करके दिए गए हैं, न कि सुधार करने या विसंगतियों को दूर करने के उद्देश्य से, बल्कि नए प्रावधान लाने के लिए जो पहले मौजूद नहीं थे।विधायिका के पास न्यायिक निर्णय के आधारित त्रुटि को हटाने की शक्ति हो सकती है, लेकिन विधायिका निर्णय को उलट या रद्द नहीं कर सकती है।विधायिका न्यायालय द्वारा जारी परमादेश से बाध्य है।एक न्यायिक निर्णय हमेशा बाध्यकारी होती है जब तक कि उन मूल सिद्धांतों में परिवर्तन नहीं किया जाता है जिन पर यह आधारित है और परिवर्तित परिस्थितियों में निर्णय नहीं दिया जा सकता था।विधायिका, एक संशोधन पेश करके, एक न्यायिक निर्णय को पलट नहीं सकती है और इसे गलत या अमान्य घोषित नहीं कर सकती है।विधायिका निर्णय के आधार को हटाने के लिए अधिनियम के प्रावधानों में संशोधन कर सकती है।"

11. वहां, इसने अभिनिर्धारित किया था कि इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि विधायिका के पास एक स्थिति या वैध अधिनियम के रूप में अधिनियमित करने की शक्ति है, लेकिन यह देखा गया है कि किसी कानून को अधिनियमित करने या मान्य करने की विधायी शक्तियां, जिसमें पिछले समय से प्रभाव के साथ संशोधन शामिल हैं, केवल अयोग्यता के कारणों को हटाने तक सीमित हो सकती हैं, जब ऐसा कानून पारित किया गया था।वास्तव में, इसका उद्देश्य यह मानना था कि हालांकि एक विधायिका के पास मूल रूप से शक्ति है, लेकिन यह उन त्रुटियों को ठीक कर सकती है, जो न्यायिक घोषणाओं में इंगित हुयी थी।लेकिन पहले के कानून में हुयी गलतियों को दूर करके संशोधित कानून तक सीमित, यह संवैधानिक न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णय के आधार को प्रभावित नहीं करेगा और न हटा देगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपर्युक्त निर्णय (जो पहले ही निकाला जा चुका है) के पैरा 25 में एक समान दृष्टिकोण व्यक्त किया गया है कि किसी विधि में विसंगति को रद्द के प्रयोजनों के लिए, पहले से ही न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णय के माध्यम से तय की गई है, हालांकि विधायिका के पास विसंगतियों को दूर करने की शक्ति है, लेकिन यह न्यायिक घोषणाओं और उसके कल्याणकारी उद्देश्य की बहुत बुनियादी नींव को दूर नहीं कर सकती है और यह विधि का एक नया प्रावधान पेश करके और पिछले समय के प्रभाव से निर्णय को नहीं बदल या रद्द नहीं कर सकती है और यह अभिनिर्धारित किया गया है कि कार्यपालिका, एक नई विधि के पुनर्वैधीकरण या विधान के बाद भी न्यायिक घोषणाओं से बाध्य होगी, जो हमेशा तब तक बाध्यकारी प्रभाव डालती है जब तक

कि जिन बुनियादी सिद्धान्तों पर यह आधारित था, उन्हे बदल नही दिया जाता है।

12. न्यायालयों द्वारा पहले ही दिए गए न्यायिक निर्णय पर बाद के कानून के प्रभाव के बारे में एक समान दृष्टिकोण, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उड़ीसा राज्य बनाम गोपाल चन्द्र राज और अन्य, 6 (1995) 242, उच्चतम न्यायालय के मामले में रिपोर्ट किए गए एक निर्णय में फिर से विचार किया गया था, जिसमें, उक्त विवाद का निर्णय करते समय तैयार किए गए प्रश्नों का उत्तर देते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने पैरा 7 में यह अभिनिर्धारित किया है कि सिद्धांतों की बुनियादी नींव और निर्णय द्वारा पहले से ही इंगित की गई कमजोरी को दूर करके किसी अधिनियम को मान्य करने की विधायिका की शक्ति को निर्धारित किया गया है, लेकिन ऐसा करते समय विधायिका केवल न्यायालय के निर्णय को दरकिनार या रद्द या ओवरराइड नहीं कर सकती है।पैरा 7 को यहाँ निकाला गया हैः.

> "7. यह एक निर्विवाद तथ्य है कि प्रतिवादी संख्या 1 से 15 को जून 1971 के बाद अलग.अलग तिथियों पर कनिष्ठ शिक्षकों के रूप में नियुक्त किया गया था और उनका चयन राज्य सरकार द्वारा नहीं बल्कि स्वास्थ्य सेवा निदेशक द्वारा नियुक्त चयन समिति द्वारा किया गया था।विचारार्थ प्रश्न यह कि क्या मान्यता अधिनियम 1988 के परिप्रेक्ष्य में ऐसे कनिष्ठ शिक्षकों की वरिष्ठता का निर्धारण भर्ती नियम 1979 के नियम 8 के उपनियम (2) के खंड (ii) के अनुसार किया जाना अपने में से या यह उक्त उपनियम के खंड (iii) के अनुसार निर्धारित किया जाना है।विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या वैलिडेशन एक्ट में कोई कमी रह गयी? लेकिन जहां तक दूसरे प्रश्न का संबंध है, यह बहुत अच्छी तरह से तय किया गया है कि विधायिका के पास किसी भी निर्णय में इंगित दुर्बलता को दूर करके एक अधिनियम को मान्य करने की शक्तियां हैं और वह भी पूर्वव्यापी रूप से, लेकिन वे केवल न्यायालय के निर्णय को दरकिनार, रद्द या ओवरराइड नहीं कर सकते हैं।न्यायालय का निर्णय केवल इस आशय का था कि चयन समिति को नियमों के तहत आवश्यक राज्य सरकार द्वारा नियुक्त नहीं किया गया था, चयन की आदेशिका दूषित हो गई थी। वैलिडेशन एक्ट ने चयन समिति की परिभाषा को बदलकर और नतीजन सम्बंधित अवधि के दौरान ऐसी समिति द्वारा की गई नियुक्तियों को मान्य करके इस कमी को दूर कर दिया है।हम उपरोक्त वैलिडेशन एक्ट में कोई दुर्बलता नहीं देखते हैं। इसलिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जवाली के दलील को स्वीकार नहीं किया जा सकता है।"

13. माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने एक अन्य निर्णय में, किसी अधिनियम के पुनर्वैधीकरण और उसके पुनवैधीकरण से पूर्व प्रचलित विधि के आधार पर न्यायालयों द्वारा पहले ही दिए गए पूर्व निर्णय पर उसके प्रभाव के बारे में एक मुद्दे पर विचार किया था। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा इलाहाबाद साप्ताहिक मामलों में रिपोर्ट किए गए एक निर्णय में विचार किया गया था। बिजेन्द्र सिंह बनाम क्षेत्रीय शिक्षा उप निदेशक, आगरा और अन्य, 672, 1996 जिसमें इलाहाबाद उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने पैरा 17 में यह मत व्यक्त किया है, जिसे नीचे उद्धृत किया गया हैः.

> "17. अब यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि क्षेत्र या विषय के भीतर विधानमंडल द्वारा विधान के पूर्ण अधिकार क्षेत्र पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है।ऐसी पूर्ण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए, विधानमंडल किसी भी निर्णय में इंगित किसी भी कानून में सूचना को हटा सकता है। विधायिका के पास इस तरह के अधिनियम को संभावित या पूर्वव्यापी रूप से लागू करने की आत्यन्तिक शक्ति है।हालाँकि, इस तरह के अधिनियमन द्वारा, विधानमंडल न्यायालय के किसी निर्णय को रद्द या ओवरराइड नहीं कर सकता है।जिन मामलों पर तब से न्यायालयों द्वारा निर्णय लिया गया है, उन्हें इस तरह के अधिनियम द्वारा मिटा नहीं दिया जा सकता है। लेकिन वे मामले जिनके संबंध में किसी भी न्यायालय द्वारा कोई निर्णय नहीं दिया गया है या जो अंतिम रूप से नहीं पहुंचे हैं और अभी भी निर्णय की प्रतीक्षा कर रहे हैं, अपवाद हैं और पूर्वव्यापी रूप से भी इस तरह के सत्यापन के दायरे में बहुत अच्छी तरह से आकर्षित किए जा सकते हैं। वैधीकरण अधिनियम, ऐसे दोषपूर्ण अधिनियमों के तहत की गई कार्रवाइयों को बचाने के उद्देश्य से पूर्वव्यापी रूप से क़ानून ठीक होना दोषों को दूर करने के लिए अधिनियमित किए जाते हैं, जब ऐसे दोषों को कुछ निर्णयों ठीक होना इंगित किया जाता है।इस तरह का कानून किसी विशेष मामले अपने में से पहले से दिए गए निर्णय को प्रभावित किए बिना कमजोरी को दूर करता है जो इस तरह के कानून के बावजूद पक्षों के बीच बाध्यकारी रहता है।इसलिए, इस तरह का कानून न्यायिक शक्ति का अतिक्रमण नहीं है।"

14. मेरा यह भी विचार है कि हालांकि किसी कानून को मान्य करने या किसी कानून को प्रतिस्थापित करने के लिए कानून के पूर्ण अधिकार क्षेत्र के प्रयोग पर कोई प्रतिबंध नहीं है, लेकिन पूर्ण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग केवल एक मौजूदा कानून पर निर्णयों द्वारा इंगित पहले से मौजूद विसंगतियों को समाप्त करने के लिए होगा, लेकिन ऐसा करते समय विधायिका अदालत के फैसले को अलग या रद्द या ओवरराइड नहीं कर सकती है।चूंकि यह उस समय की प्रचलित विधि के अधीन,

जो सुसंगत समय पर प्रवृत्त थी, विनिश्चय किया गया है और उसी पुनर्प्रमाणन का पिछले समय से प्रभाव नहीं हो सकता है, विशेष रूप से उस तत्काल मामले की परिस्थितियों में जब राज्य द्वारा बनाए गए नए विधानमंडल के प्रभाव को अधिनियमित किया गया था और "शहीदों की विधवाओं" को दी जाने अनुग्रह राशि की अपनी स्वयं की कल्याणकारी योजना का लाभ वापस लेने का इरादा था, जिन्हें स्वीकृत रूप से किया गया था और एक साक्ष्य के रूप में, "युद्ध हताहत" के रूप में भी स्थापित किया गया था, और जो "सैन्य अभियान" के दौरान मारे गए थे, जिनके विवरण पर क्रमशः प्रत्येक रिट याचिकाओं के संबंध में विचार किया गया है।

15. अनुग्रह राशि के लाभ के विस्तार का यह दर्शन, इस तथ्य के अलावा कि यह उन सैनिकों की वीरता को मान्यता दे रहा है, जो देश के लिए शहीद हुए और वित्तीय सहायता प्रदान कर रहे थे, जो एक सैनिक परिवार के जीवित बचे लोगों के लिए एक निर्वाह भी हो सकता है, इसका प्रभाव बाद के चरण में विशेष रूप से तब दूर नहीं किया जा सकता है, जब यह संविधान के इरादे और उद्देश्य के साथ जाता है, जिसने अपनी प्रस्तावना में हमारे देश को एक कल्याणकारी राज्य के रूप में वर्णित किया है।

16. कल्याणकारी अवधारणा एक साथ भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के निहितार्थ को भी आकर्षित करेगी और प्रतिवादियों अधिकारियों को एक अंतर बनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जिससे युद्ध विधवाओं को अनुग्रह राशि के भुगतान की कल्याणकारी योजना के लाभ से वंचित किया जा सके, जिनके पति राष्ट्र के लिए एक सैन्य अभियान में शहीद हो गये हैं, और अधिक हताहत हुए हैं और इस अदालत की राय के अनुसार उपरोक्त सिद्धांत के पीछे तर्क यह होगा कि सभी युद्ध विधवाएं, जिनके पति समूह के अभियान के दौरान मारे गए हैं, जिन्होंने पहले ही राज्य की अनुग्रह योजना के तहत लाभ उठाया था, जो एक कल्याणकारी योजना है, और यहां याचिकाकर्ता नहीं हैं, उन्हें युद्ध विधवा के दावे के लिए आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है।इसलिए, बाद की विधायिका राज्य द्वारा जारी लाभकारी विधान, कार्यालय ज्ञापन या परिपत्रों के प्रभाव को ओवरराइड नहीं करेगी। "भुवनेश्वर सिंह आदि बनाम भारत संघ आदि 6 (1994) 77 उच्चतम न्यायालय

के मामले में, जिसमें किसी विधि को पिछले समय से लागू करने और पूर्व विद्यमान विधि में परिवर्तन लाने के लिए दोषों को दूर करने के लिए विधि के प्रभाव के सिद्धांतों पर विचार किया गया था, यद्यपि विधायिका की शक्ति को वैध ठहराया गया है, में दिए गए एक निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लिया गया एक समान दृष्टिकोण; लेकिन फिर उक्त निर्णय के पैरा **11** में एक विशिष्टता का वर्णन किया गया है, जिसे यहां नीचे निकाला गया हैः.

> "11. समय–समय पर यह विवाद उत्पन्न हुआ है कि क्या उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के न्यायिक निर्णयों के प्रभाव को विगत समय से कानून में संशोधन करके मिटा दिया जा सकता है।ऐसे कई संशोधन अधिनिमयमों को विधिमान्यकरण अधिनियम, पुकारा जाता है अधिनियम में उस दोष को पूर्वव्यापी रूप से हटाकर विशेष अधिनियमों के तहत की गई कार्यवाही को मान्य करना जिसके कारण अधिनियम या उसके हिस्से को अधिकारातीत घोषित किया गया था।इस न्यायालय द्वारा इस तरह की कवायद को न्यायालयों की न्यायिक शक्ति का अतिक्रमण नहीं माना गया है।कानून को आधार बनाकर सक्षम न्यायालयों के निर्णयों या आदेशों को अप्रभावी बनाने का अभ्यास कानून को मान्य करने का एक प्रसिद्ध उपकरण है।इस न्यायालय ने बार.बार कहा है कि इस तरह के मान्य कानून जो अयोग्यता के कारण को हटा दिये जाते हैं, उन्हें न्यायिक शक्ति पर अतिक्रमण नहीं माना जा सकता है।उसी समय, किसी भी अधिनियम के तहत शक्ति का प्रयोग करने में कोई भी कार्रवाई जिसे अदालत द्वारा अमान्य घोषित किया गया है, को विधिमान्यकरण अधिनियम द्वारा मान्य नहीं किया जा सकता है। विधिमान्यकरण अधिनियम केवल ऐसा कहकर जब तक कि अदालत द्वारा बताए गए दोष को पिछले समय के प्रभाव से हटा नहीं दिया जाता है, मान्यता देने वाले कानून को अयोग्यता के कारण हटा दिया जाना चाहिए।जब तक किसी अधिनियम के तहत अदालत द्वारा बताए गए ऐसे दोष या अधिकार की कमी को बाद के अधिनियम द्वारा पिछले समय के प्रभाव से हटा नहीं दिया जाता है, तब तक अदालत के फैसले की बाध्यकारी प्रकृति को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।"

17. उक्त निर्णय में फिर से उसी स्थिति पर विचार किया गया है कि जिस दोष को विधायिका द्वारा पिछले समय के प्रभाव से किसी कानून में संशोधन करके या एक विधिमान्यकरण अधिनियम द्वारा ठीक किया गया है, वह लाभकारी विधान जिसके आधार पर लाभ पहले ही समान रूप से तैनात युद्ध विधवाओं में से कुछ को दिया जा चुका है, उस समय के कानून के तहत अर्जित अधिकार को कानून में संशोधन करके नहीं लिया जा सकता है, शेष युद्ध विधवाओं के संबंध में जो

अनुग्रह राशि से वंचित थीं, जैसे कि शहीदों की अन्य युद्ध विधवाओं को दिया गया है।

18. दूसरी ओर, प्रतिवादी के वकील ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वर्ष 2019 की सिविल अपील संख्या 6689/6690, "मंजू तिवारी बनाम भारत संघ और अन्य" में दिए गए एक निर्णय पर भरोसा व्यक्त किया था, जिसमें तर्क दिया गया था कि दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष विशेष परिवार पेंशन के बजाय उदारीकृत परिवार पेंशन का लाभ देने से इनकार कर दिया गया था, जिसमें कहा गया था कि विधवाएं, इसमें अनुग्रह राशि एकमुश्त भुगतान की हकदार नहीं होंगी, क्योंकि वास्तव में उक्त मामला पूरी तरह से एक अलग तथ्यात्मक मैट्रिक्स पर आधारित था, जहां माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष परिवार पेंशन के बजाय उदार परिवार पेंशन का लाभ देने से इनकार कर दिया था और यह कहा था कि यह एक ''शारीरिक क्षति थी न कि युद्ध में हुयी क्षति'' क्योंकि कहा गया था कि सेना के जिस जवान की दुखद मृत्यु हुई थी, वह सेना के ऑपरेशन में भाग लेने के कारण नही हुई थी, बल्कि हृदय घात के कारण हुई थी।

19. उस स्थिति में, मेरी राय है कि जहां माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जांच की गई है और इस प्रकार उक्त मामले में सशस्त्र बल न्यायाधिकरण द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को बरकरार रखते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि तथ्यात्मक रूप से दिल के दौरे के कारण हुआ था, न कि सेना के अभियान के कारण; तथ्यात्मक रूप में यह निर्धारित किया गया था कि यह एक शारीरिक क्षति थी न कि एक युद्ध में हुई क्षति।इसलिए, मेरी राय है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उसमें निर्धारित सिद्धांत, जिस पर प्रतिवादी के लिए वकील द्वारा भरोषा किया गया है, इस तथ्य के अलावा कि हालांकि यह थोड़ा अलग हो सकता है, क्योंकि यह विशेष परिवार पेंशन की तुलना में उदारीकृत परिवार पेंशन की पात्रता के दावे का निर्धारण कर रहा था, लेकिन विशेष रूप से जब यह एक शारीरिक दुर्घटना के संबंध में था, जहां इनकार अनुग्रह राशि भुगतान के लिए किया गया है न कि युद्ध हताहत के लिए।उक्त निर्णय के पैरा 4 और 5 का संदर्भ दिया जा सकता है, जो यहां निकाला गया हैः.

"4. याचिकाकर्ता ने उच्च न्यायालय के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 226 में एक याचिका दायर करते कहा कस्टोडियन ने कोयले को उठाने के लिए खर्चों में कटौती की थी। जबकि कोकिंग कोयला खदान का प्रबन्धन कस्टोडियन के अन्डर था। लेकिन उठाए गए कोयले की मात्रा के लिए कीमत जमा नहीं की थी, जो केन्द्र सरकार के अधीन निहित उक्त कोयला खदान की तारीख से पहले की तारीख को स्टॉक में पड़ी थी।उच्च न्यायालय ने उक्त आवेदन को यह अभिनिर्धारित करते हुए स्वीकार कर लिया कि याचिकाकर्ता उक्त कोयला खदान का स्वामी था और 30.4.1972 तक बिना बिके पड़े कोयले के भंडार के लिए ऋण पाने का हकदार था। एक निर्देश दिया गया था कि खाते को पुनर्गठित किया जाए और याचिकाकर्ता को भुगतान किया जाए।

5. सेण्ट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड, उस आवेदन के प्रतिवादियों में से एक, ने इस न्यायालय के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 136, के तहत एक याचिका दायर की, अपील करने की अनुमति दी गई थी, लेकिन अंततः यह अपील 23-8-1984 को खारिज कर दी गई।इस अदालत ने कहाः(एस. सी. सी. पृष्ठ 433, पैरा 11) "मान लीजिए कि मालिक से दावा की गई राशि खदान से कोयला निकालने की लागत को दर्शाती है। उच्च न्यायालय के समक्ष और हमारे समक्ष अपीलार्थियों ने और उनकी ओर से पेश श्री सिन्हा ने इस स्थिति को स्वीकार किया कि यदि निकाला गया कोयला नियत दिन से पहले बेचा गया होता, तो मालिक कीमत का हकदार होता।केवल यह तथ्य कि निकाला गया कि कोयला नियत तिथि के प्रारम्भ में स्टॉक में रह गया था, स्थिति में कोई अंतर नहीं ला सकता है।खर्चों को निपटान के समय प्राप्त होने वाले स्टॉक के बिक्री मूल्य के विरुद्ध निर्धारित किया जाना था।इसलिए, स्थिति को संतुलित करने के लिए कोयले के भंडार को ध्यान में रखना पड़ता था।'खान' की परिभाषा पर निर्भरता और निष्कर्ष का प्रतिकार करने के लिए राष्ट्रीकरण अधिनियम की धारा 10 अपीलार्थियों का लाभ नहीं उठा सकती है।वास्तव में, अपीलार्थियों की ओर से प्रस्तुत किया गया निवेदन मामले के सामान्य समझ तर्क के इतने विपरीत है कि विधायी जनादेश की अनुपस्थिति में में हमें इसे अस्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है। "

20. चूंकि उक्त मामला पूरी तरह से एक अलग तथ्य पर आधारित था, जहां दिल के दौरे के कारण मृत्यु हुयी थी, मौजूदा मामले में लागू नहीं होगी, जहां याचिकाकर्ताओं के दिवंगत पतियों को पहले से ही युद्ध के कारण शहीद माना जा रहा था।

21. इसके अलावा, याचिकाकर्ता द्वारा राज्य की कल्याणकारी नीति के तहत मांगा गया लाभ युद्ध विधवाओं, उनके दिवंगत पतियों, जिन्होने देश के लिये अपना जीवन न्यौछावर कर दिया, उनकी वीरता को मान्यता देकर प्रदान किया

गया है। अधिनियम के निहितार्थ जिसे 2021 में प्रख्यापित किया गया है, का न्यायिक निर्णय द्वारा पहले से लागू कल्याणकारी योजना के लाभ पर कोई पिछले समय से प्रभाव नहीं पड़ेगा।विशेष रूप से जब पात्रता जो पहले अर्जित हो चुकी हो।

(2) रिट याचिका (एम/एस) सं **339 of 2021,** ''पदमा नेगी बनाम उत्तराखंड राज्य और अन्य"

मुख्य रूप से कानूनी मुद्दा जो इस रिट याचिका में भी निहित है, पहले से ही कानून के तथ्यों और विचारों के एक ही सेट को निहित करता है, जहां मौजूदा रिट याचिका का याचिकाकर्ता, जो एक "युद्ध विधवा" है।केवल इस रिट याचिका में थोड़ा तथ्यात्मक अंतर है, इस हद तक कि याचिकाकर्ता के पति स्वर्गीय श्री उत्तम सिंह की 30.01.1996 को जम्मू और कश्मीर में ऑपरेशन "रक्षक" में आतंकवादी ऑपरेशन के दौरान, एक क्रास फायरिंग में मृत्यु हो गई थी। याचिकाकर्ता ने रिट याचिका में यह मामला उठाया है कि उसके पति को सिपाही संख्या. 4179654 डब्ल्यू सौंपा गया था, और वह कुमाऊं रेजिमेंट में एक सैनिक था, अंततः, "युद्ध हताहत" के रूप में भी घोषित किया गया था, लेकिन उक्त घोषणा के बावजूद, याचिकाकर्ता, जो शहीद की विधवा है, को सरकारी आदेश संख्या. 169/XVII- 3/14-09 (31)/2014, दिनांक 05.03.2014 के तहत अनुध्यात अनुग्रह राशि के लाभ के साथ गणना और भुगतान नहीं किया गया है। कारण पर चर्चा पहले की रिट याचिका में की गयी है। WPMS No.511 of 2021, इस रिट याचिका को भी उन्हीं नियमों और शर्तों के तहत अनुमति दी जाएगी।

रिट याचिका (एम/एस) नं**. 324 of 2021,** "लीला देवी बनाम उत्तराखंड राज्य और अन्य"

इस रिट याचिका में केवल तथ्यात्मक अंतर यह है कि इस मामले में, इस याचिका के याचिकाकर्ता, भी शहीद स्वर्गीय श्री बलवंत सिंह मेहरा की विधवा है, 15.06.1999 को (जम्मू और कश्मीर) में आतंकवादियों के खिलाफ किए गए

सैन्य अभियान "रक्षक" में शहीद हो गये थे, और उसे भी "युद्ध हताहत" के रूप में घोषित किया गया था, लेकिन इस न्यायालय द्वारा सिद्धांत के निपटारे के बावजूद, उपरोक्त निर्णयों में, जो माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक अंतिमता प्राप्त कर चुका हैं, उसे अनुग्रह राशि का भुगतान नहीं किया गया है, जैसा कि सरकारी आदेश सं. 169/XVII-3/14-09 (31)/2014, दिनांक 05.03.2014. मे निर्देश किया गया है। जिन कारणों पर मैंने पहले ही विचार किया है, उपरोक्त पैरा में, 2021 की रिट याचिका (एम/एस) संख्या 511 में उठाए गए अभिवचनों पर विचार करते समय, वही तर्क और कारण, मौजूदा रिट याचिका में भी लागू किए जाएंगे।यह रिट याचिका भी WPMS No. 511 of 2021 में दिए गए नियमों और शर्तों के तहत अनुमति प्राप्त होगी, जिसमें याचिकाकर्ता को अनुग्रह राशि का भुगतान करने के लिए प्रतिवादी परमादेश आदेश जारी किया जाएगा और विफलता के मामले में, याचिकाकर्ता सामान्य मौजूदा प्रचलित बैंक दर पर अनुग्रह राशि के भुगतान पर देय ब्याज के प्रेषण का हकदार होगा, जब तक कि राशि वास्तव में उसे वितरित नहीं की जाती है।आश्रित होने के उसके अधिकारों को सुरक्षित रखने के अलावा, और उक्त समय अवधि के भीतर राशि का भुगतान नहीं किए जाने की स्थिति में कानून के तहत उसके लिए उपलब्ध उपाय भी उपलब्ध है।

<u>रिट याचिका (एम/एस) नं. **325 of 2021**, "अनीता देवी बनाम उत्तराखंड राज्य और अन्य"</u>

याचिकाकर्ता स्वर्गीय श्री जीवन सिंह की "युद्ध विधवा" है, उन्होंने सशस्त्र बलों में सेवा की थी और 12.01.2002 को ऑपरेशन में भाग लेने के दौरान उनका दुखद निधन हो गया था। ऑपरेशन ''मेघदूत/पराक्रम जो सेना द्वारा जम्मू और कश्मीर में आतंकवादी गतिविधियों के खिलाफ और सेना के अभियान में उनकी सक्रिय भागीदारी के कारण आयोजित किया गया था।हालांकि, तथ्य यह है कि उनके पति स्वर्गीय श्री जीवन सिंह, जो 20 कुमाऊं रेजिमेंट में सिपाही थे; सिपाही संख्या. 4194312A), को भी प्रतिवादियों द्वारा स्वयं एक "युद्ध हताहत" के रूप में माना गया था।

उस स्थिति में, मेरी राय है कि वह सरकारी आदेश सं. 169/XVII-3/14-09 (31)/2014, दिनांक 05.03.2014. इसलिए इस रिट याचिका को भी उन्हीं नियमों और शर्तों के तहत अनुमति दी जाएगी।

रिट याचिका (एम/एस) नं. **338 of 2021,** "लीला स्यतरी बनाम उत्तराखंड राज्य और अन्य"

मौजूदा रिट याचिका का याचिकाकर्ता एक युद्ध विधवा हैए जिसके पति स्वर्गीय श्री दौलत सिंह की 12.05.1996 को आतंकवादी गतिविधियों के खिलाफ जम्मू और कश्मीर में "रक्षक" नामक सैन्य अभियान के दौरान दुखद मृत्यु हो गई थी। 12.05.1996 को सेना के अभियान के दौरान उनकी मृत्यु हो गई, और उन्हें "युद्ध हताहत" घोषित किया गया।याचिकाकर्ता लीला स्यतरी के दिवंगत पति, प्रासंगिक समय पर, जब वे एक सैन्य अभियान में लगे हुए थे, वह एक हवलदार/क्लर्क बेयरिंग सर्विस नंबर. 4178825L के रूप में काम कर रहे थे, और वह 21 कुमाऊं रेजिमेंट के साथ काम कर रहे थे।चूंकि याचिकाकर्ता के दिवंगत पति की स्थिति, 21 कुमाऊं रेजिमेंट में लगे होने और "युद्ध हताहत" होने के कारण, प्रतिवादियों द्वारा विवादित तथ्य नहीं है, इसलिए याचिकाकर्ता, जो एक युद्ध विधवा है, भी सरकारी आदेश सं. 169/XVII 3/14-09 (31)/2014, दिनांक 05.03.2014.इसलिए यह रिट याचिका भी **2021** के WPMS No.511 में पारित निर्णय के समान नियमों और शर्तों के तहत अनुमत होगी।

रिट याचिका में (एम/एस) नं. **2021** का **340,** "राम भंडारी बनाम उत्तराखंड राज्य और अन्य"

वास्तव में, यह रिट याचिका भी एक सामान्य कानून के निर्धारण को संलग्न करती है, जिसमें युद्ध विधवाओं को अनुग्रह भुगतान की पात्रता के बारे में पहलू पर विचार करने के बारे में, मौजूदा रिट याचिका में एकमात्र तथ्यात्मक अंतर यह है कि याचिकाकर्ता स्वर्गीय श्री जीवन सिंह के दिवंगत पति, जो भारतीय सेना के साथ हवलदार के रूप में काम कर रहे थे, और जिनकी सेवा संख्या 4177411 एम थी, वे तीसरी कुमाऊं रेजिमेंट के सशस्त्र बल के सदस्य थे। उन्होंने भी, आतंकवादी के विरुद्ध जम्मू और कश्मीर में ऑपरेशन "रक्षक" करते

समय, कास फायरिंग में बंदूक की गोली से घायल होने के कारण, 04.07.1997 को दुखद मृत्यु का सामना किया था, उन्हें "युद्ध हताहत" के रूप में घोषित किया गया था, और युद्ध हताहत की उक्त घोषणा 04.07.1997 को की गई थी, ये ऐसे तथ्य हैं जो जवाबी शपथ पत्र में प्रतिवादियों द्वारा विवादित नहीं हैं।अतः यह रिट याचिका भी उन्हीं नियमों और शर्तों के अधीन अनुज्ञात की जाएगी जिन पर पहले ही 2021 की WPMS No. 511 की रिट याचिका में विचार किया गया था।

22. अतः रिट याचिका स्वीकार की जाती है।याचिकाकर्ताओं को अनुग्रह राशि का तुरंत भुगतान करने के लिए प्रतिवादियों को परमादेश आदेश जारी किया जाता है, क्योंकि वह अन्यथा सरकारी आदेश संख्या. 169/XVII-3/14-09 (31)/2014, दिनांक 05.03.2014 के तहत हकदार होगी।एतद्द्वारा यह निर्देश दिया जाता है कि प्रतिवादीगण इस निर्णय की प्रमाणित प्रति की प्रस्तुति की तारीख से छह सप्ताह की अवधि के भीतर भुगतान करना सुनिश्चित करेंगे।यदि राशि का भुगतान उपरोक्त अवधि के भीतर नहीं किया जाता है, तो याचिकाकर्ता कानून के तहत प्रदान की गई अन्य उपयुक्त कार्यवाही के अलावा मौजूदा प्रचलित बैंक दर पर ब्याज का हकदार होगा।

23. अतः उल्लिखित कारणों के सन्दर्भ में रिट याचिका में संबन्धित दावे के लिये रिट याचिका स्वीकार की जाती है , हालांकि लागत के सम्बन्ध में कोई आदेश नही होगा।

(शरद कुमार शर्मा, जे.)
06.08.2021

एनआर /